त्रयोदश खण्ड

कलकत्ता में भक्त-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण

प्रथम परिच्छेद

(अन्तरंगों के संग में बसुबलराम-मन्दिर में)

तीन काफी देर के बज चुके हैं। चैत्र मास है, प्रचण्ड-धूप। श्रीरामकृष्ण दो-एक भक्तों के संग में बलराम की बैठक में बैठे हैं। मास्टर के साथ बातें कर रहे हैं।

आज है 6 अप्रैल, 1885 ईसवी; सोमवार, 25वाँ चैत्र, कृष्णा सप्तमी। ठाकुर कलकत्ता में भक्त-मन्दिर में आए हैं। सांगोपांगों आदि को देखेंगे और निमु गोस्वामी की गली में देवेन्द्र के घर जाएँगे।

(सत्य वाणी और रामकृष्ण— छोटे नरेन, बलराम, पूर्ण)

ठाकुर ईश्वर-प्रेम में रात-दिन मतवाले हुए रहते हैं और अनुक्षण (निरन्तर, सर्वदा) रहते हैं भावाविष्ट व समाधिस्थ। बहिर्जगत में मन एकदम नहीं हैं। केवल अन्तरंगगण जितने दिन अपने-आपको नहीं जान पाते हैं, उतने दिन उनके लिए व्याकुल हैं— बाप-माँ जैसे अक्षम बच्चों के लिए व्याकुल होते हैं और सोचते रहते हैं कि किस प्रकार ये मनुष्य (बड़े) होंगे। अथवा पक्षी जैसे शावकों का लालन-पालन करने के लिए व्याकुल रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— कह दिया था, तीन बजे आऊँगा, तभी आया हूँ। किन्तु बड़ी धूप है।

मास्टर— जी हाँ, आपको बड़ा कष्ट हुआ है।

भक्तगण ठाकुर को हवा करते हैं।

श्रीरामकृष्ण— छोटे नरेन के लिए और बाबूराम के लिए आया हूँ। पूर्ण को क्यों नहीं लाए?

मास्टर— सभा में आना नहीं चाहता। उसे भय रहता है। आप सबके सामने सुख्याति करते हैं, पीछे घर में पता लग जाता है।

(पण्डितों की और साधुओं की शिक्षा भिन्न— साधु-संग)

श्रीरामकृष्ण— हाँ, वह तो है ही। यदि कह देता हूँ, अब वैसा नहीं कहूँगा। अच्छा, तुम पूर्ण को धर्मशिक्षा देते हो। यह तो बढ़िया है।

मास्टर— उसके अतिरिक्त विद्यासागर महाशय की पुस्तक 'Selection...' में वही बात ही है— ईश्वर को देह-मन-प्राण देकर प्यार करो।* यह बात सिखाने से मालिक (व्यवस्थापक) यदि नाराज होते हैं तो फिर क्या किया जाए?

श्रीरामकृष्ण— उनकी पुस्तकों में बहुत-सी बातें चाहे होती तो हैं, किन्तु जिन्होंने पुस्तक लिखी हैं, वे धारणा नहीं कर सकते। साधु-संग होने से ही तब धारणा होती है। ठीक-ठीक त्यागी साधु यदि उपदेश देता है, तब ही लोग वह बात सुनते हैं। केवल कोरा पण्डित यदि पुस्तक लिखे या मुख से उपदेश दे, तो उस बात की उतनी धारणा होती नहीं। जिसके पास गुड़ की मटकी रहती है, वह यदि रोगी से कहे, 'गुड़ मत खाना', रोगी उसकी बात उतनी नहीं सुनता।

"अच्छा, पूर्ण की अवस्था कैसी देखते हो? भाव-टाव कुछ होता है?"

---

* With all thy soul love God above
And as thyself thy neighbour love.
(अपनी अन्तरात्मा से ऊपर भगवान को प्यार करो और अपने पड़ोसी को अपनी तरह प्यार करो।)

मास्टर— कहाँ, भाव की अवस्था बाहर तो ऐसी नहीं देखता। एक दिन आपकी वही बात उससे कही थी?

श्रीरामकृष्ण— कौन-सी बात?

मास्टर— वही जो आपने बताई थी!— सामान्य आधार होने पर भाव को सम्हाल पाता नहीं। बड़ा आधार होने पर भीतर खूब भाव होता है किन्तु बाहर प्रकाश नहीं रहता। जैसे कहा था, सायर दीघि (बड़े लम्बे तालाब) में हाथी उतरे तो पता भी नहीं लगता, किन्तु पोखरी (गढ़ी) में उतरे तो उथल-पुथल मच जाती है, किनारों के ऊपर भी जल उछल पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण— बाहर उसका भाव वैसा नहीं होगा। उसका आकर (आधार) अलग है! और सब लक्षण भले हैं। क्या कहते हो?

मास्टर— आँखें दोनों खूब सुन्दर उज्ज्वल हैं— जैसे ठेल कर बाहर आ रही हैं।

श्रीरामकृष्ण— दोनों आँखें केवल उज्ज्वल होने से नहीं होता। किन्तु ईश्वरीय चक्षु पृथक् होते हैं। अच्छा, उससे पूछा था कि उसके बाद (ठाकुर के साथ मिलने के बाद) क्या हुआ था?

मास्टर— जी हाँ, बातें हुई थीं। वह चार-पाँच दिन से कहता है, ईश्वर-चिन्तन करने लगने पर और उनका नाम करने लगने पर आँखों से जल, रोमाञ्च— ये सब होता है।

श्रीरामकृष्ण— तब फिर और क्या?

ठाकुर और मास्टर चुप हैं। कुछ क्षण उपरान्त मास्टर बातें करते हैं। कहते हैं,

''वह खड़ा हुआ है।''

श्रीरामकृष्ण— कौन?

मास्टर— पूर्ण। लगता है अपने घर के दरवाजे पर खड़ा हुआ है। हमारे किसी के जाने पर दौड़ा आएगा, आकर हम सबको नमस्कार कर जाएगा।

श्रीरामकृष्ण— आहा! आहा!

ठाकुर तकिये के सहारे विश्राम करते हैं। मास्टर के संग में एक बारह वर्ष

का बालक आया है, मास्टर के स्कूल में पढ़ता है, नाम है क्षीरोद।

मास्टर कहते हैं,

''लड़का बड़ा अच्छा है। ईश्वर की बातों में खूब आनन्द लेता है।''

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— आँखें दोनों जैसे हिरण की जैसी हैं।

लड़के ने ठाकुर के पैरों में हाथ देकर भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया और अति भक्ति-भाव से ठाकुर की पदसेवा करने लगा। ठाकुर भक्तों की बातें कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— राखाल घर में है। उसका भी शरीर ठीक नहीं है। फोड़ा हुआ है। सुना है उसके एक लड़का होगा।

पल्टु और विनोद सामने बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(पल्टु के प्रति, सहास्य)*— तूने अपने बाप से क्या कहा था? *(मास्टर के प्रति)*— इसने पिता से यहाँ आने के विषय में जवाब दिया था? *(पल्टु के प्रति)*— तूने क्या कहा था?

पल्टु— कहा था, हाँ मैं उनके पास जाता हूँ, यह क्या अन्याय (बुरा) है? *(ठाकुर और मास्टर का हास्य)*। यदि प्रयोजन हुआ तो और भी अधिक बोलूँगा।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य, मास्टर के प्रति)*— ना, क्यों जी, इतनी दूर बढ़ना!

मास्टर— जी। ना, इतना बढ़ना ठीक नहीं। *(ठाकुर का हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण *(विनोद के प्रति)*— तू कैसा है? वहाँ पर नहीं गया?

विनोद— जी, जा रहा था, तब फिर भय से नहीं गया। थोड़ा असुख है, शरीर ठीक नहीं है।

श्रीरामकृष्ण— चल ना, वहाँ पर! सुन्दर हवा है, (रोग) हट जाएगा।

छोटे नरेन आए हैं। ठाकुर हाथ-मुख धोने जा रहे हैं। छोटे नरेन गमछा (परना) लेकर ठाकुर को जल देने गए। मास्टर भी संग में हैं।

छोटे नरेन पश्चिम के बरामदे के उत्तर-कोने में ठाकुर के पाँव धो

रहे हैं। निकट मास्टर खड़े हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण— बड़ी (भारी) धूप है।

मास्टर— जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण— तुम किस प्रकार इतने-से कमरे के भीतर रहते हो? ऊपर के कमरे में गर्मी नहीं होती?

मास्टर— जी हाँ। खूब गर्म होता है।

श्रीरामकृष्ण— उस पर स्त्री को सिर का रोग है। ठण्डे में रखोगे।

मास्टर— अच्छा जी, कह दिया है नीचे के कमरे में लेटने को।

ठाकुर बैठने वाले कमरे में फिर दोबारा आकर बैठ गए हैं और मास्टर से कहते हैं,

''तुम इस रविवार को क्यों नहीं गए?''

मास्टर— जी, घर में तो और कोई है नहीं। उस पर फिर रोग (स्त्री को सिर का) है। कोई देखने वाला नहीं।

ठाकुर गाड़ी में निमु गोस्वामी की गली में देवेन्द्र के घर जा रहे हैं। साथ छोटे नरेन, मास्टर, और भी दो-एक भक्त हैं। पूर्ण की बात कह रहे हैं। पूर्ण के लिए व्याकुल हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— खूब आधार है! वैसा यदि न होता तो अपने लिए क्या जप करवाता? वह तो यह सब बात जानता नहीं।

मास्टर और भक्तगण अवाक् होकर सुन रहे हैं कि ठाकुर ने पूर्ण के लिए बीज-मन्त्र जप किया है।

श्रीरामकृष्ण— आज उस को ले आने से ही होता! लाए क्यों नहीं?

छोटे नरेन की हँसी देखकर ठाकुर और भक्तगण सब हँसते हैं। ठाकुर आनन्द से उसको दिखाकर मास्टर से कह रहे हैं—

''देखो, देखो, अनजान-सा हँस रहा है। जैसे कुछ जानता नहीं। किन्तु मन के भीतर कुछ भी नहीं, तीनों ही मन में नहीं— ज़मीन, जोरू, रुपया। कामिनी-

काञ्चन मन से एकदम (बिलकुल) नहीं जाए तो भगवान-लाभ नहीं होता।''

ठाकुर देवेन्द्र के घर जा रहे हैं। दक्षिणेश्वर में देवेन्द्र से एक दिन कहा था, ''सोच रहा हूँ एक दिन, तुम्हारे घर जाऊँगा।'' देवेन्द्र ने कहा था, ''मैं भी यही कहने के लिए आज आया हूँ, इस रविवार को जाना होगा।'' ठाकुर ने कहा, ''किन्तु तुम्हारी आय कम है, अधिक लोगों को मत कहो। और गाड़ी-भाड़ा बहुत अधिक है।'' देवेन्द्र ने हँसकर कहा था, आय कम ही हो चाहे, 'ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्' (उधार करके घी पीजिए, घी पीना चाहिए)। ठाकुर यह बात सुनकर हँसने लगे। हँसी फिर थमती ही नहीं।

कुछ देर में घर पहुँच कर कहते हैं,

''देवेन्द्र, मेरे खाने के लिए कुछ मत करो, ऐसे ही सामान्य। शरीर उतना अच्छा नहीं है।''

द्वितीय परिच्छेद

(देवेन्द्र के घर में भक्तों के संग में)

श्रीरामकृष्ण देवेन्द्र के घर, बैठकखाने में भक्तों की मजलिस करके बैठे हुए हैं। बैठकखाना मकान के एकतले पर है। सन्ध्या हो गई है। कमरे में प्रदीप जल रहा है। छोटे नरेन, राम, मास्टर, गिरीश, देवेन्द्र, अक्षय, उपेन्द्र इत्यादि अनेक भक्त निकट बैठे हुए हैं। ठाकुर एक छोकरे भक्त को देख रहे हैं और आनन्द में मग्न हो रहे हैं। उसको उपदेश करते हुए भक्तों से कह रहे हैं,

''तीनों ही इसमें बिलकुल भी नहीं हैं, जो संसार में बद्ध करते हैं— ज़मीन, रुपया और स्त्री। इन्हीं तीन वस्तुओं के ऊपर मन रखने पर भगवान के ऊपर मन रखने का योग नहीं होता। इसने और फिर क्या देखा था? *(भक्त के प्रति)* बतला रे, क्या देखा था?

(कामिनी-काञ्चन-त्याग और ब्रह्मानन्द)

भक्त *(सहास्य)*— देखे थे, कितने सारे 'गू' के भाण्डे! कोई भाण्डे के ऊपर बैठा है, कोई कुछ अन्तर पर बैठा हुआ है।

श्रीरामकृष्ण— संसारी मनुष्य जो ईश्वर को भूले हुए हैं, उनकी वही दशा इसने देखी है। जभी मन से इसका सब त्याग हो रहा है। कामिनी-काञ्चन के ऊपर से यदि मन चला जाता है, फिर क्या भावना (चिन्ता)!

''उह! कैसा आश्चर्य! मेरा तो कितना जप-ध्यान करके तब गया था। इसका एकदम इतनी शीघ्र क्योंकर मन से त्याग हो गया? काम का चले जाना क्या सहज व्यापार है! मेरी ही छः मास पश्चात् छाती कैसे-कैसे कर रही थी! तब वृक्ष के नीचे लेटा हुआ रोने लगा था। कहा था, माँ! यदि वैसा होगा, तो फिर गले पर छुरी मार लूँगा!

(भक्तों के प्रति) ''कामिनी-काञ्चन यदि मन से चला गया, तो फिर और बाकी क्या रह गया? तब है केवल ब्रह्मानन्द।''

तब शशी अभी-अभी ठाकुर के पास आना-जाना कर रहे थे। वे तब विद्यासागर के कॉलिज में बी०ए० के प्रथम वर्ष में पढ़ते थे। ठाकुर अब उनकी बातें करते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— वही जो लड़का जाता है, देखा है! उसका मन एक-एक बार रुपये में कुछ दिन जाएगा। किन्तु कइयों का देखा है, बिलकुल भी नहीं जाता। कई लड़के विवाह ही नहीं करेंगे।

भक्तगण निःशब्द सुन रहे हैं।

(अवतार को कौन पहचान सकता है?)

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— मन से कामिनी-काञ्चन पूर्णतः बिना गए अवतार को पहचानना कठिन है। बैंगन वाले से हीरे के दाम पूछे थे। वह बोला, मैं इसके बदले नौ सेर बैंगन दे सकता हूँ, इससे एक भी अधिक नहीं

दे सकता। *(सबका हास्य और नरेन का उच्च हास्य।)*

ठाकुर ने देख लिया, छोटे नरेन ने बात का मर्म फट से समझ लिया है।

श्रीरामकृष्ण— इसकी कैसी सूक्ष्म बुद्धि है! न्यांगटा इसी प्रकार झट से समझ लिया करता था— गीता, भागवत, जहाँ जो होता, वह समझ लेता था।

(कौमार वैराग्य आश्चर्य— वेश्या का उद्धार कैसे होता है ?)

श्रीरामकृष्ण— बचपन से ही कामिनी-काञ्चन त्याग, यह तो बड़ा आश्चर्य! बहुत ही कम लोगों का होता है। वह न हो तो जैसे चील-खाया आम— ठाकुर की सेवा में नहीं लगता। स्वयं खाने में भय होता है।

''पहले अनेक पाप किए हैं, फिर बूढ़ी आयु में हरि-नाम करता है— यह मन्द से अच्छा है।

''अमुक मल्लिक की माँ बहुत बड़े व्यक्ति के घर की औरत है। वेश्या की बात में पूछा, उनका क्या उद्धार होगा? निज पहले-पहले अनेक प्रकार किया था ना! तभी पूछा। मैंने कहा— 'हाँ होगा, यदि आन्तरिक व्याकुल होकर रोए और कहे, अब और नहीं करूँगी। केवल हरि-नाम करने से क्या होगा! आन्तरिक रोना होगा'।''

तृतीय परिच्छेद

(देवेन्द्र-भवन में ठाकुर कीर्त्तनानन्द में और समाधिमन्दिर में)

अब खोल-करताल लेकर संकीर्त्तन हो रहा है। कीर्त्तनिया गा रहा है—

कि दिखिलाम रे, केशव भारतीर कुटिरे,
अपरूप ज्योति, श्री गौरांग मूरति,
दुनयने प्रेम बहे शतधारे॥

गौर, मत्त मातंगेर प्राय, प्रेमावेशे नाचे गाय,
कभु धूलाते लुटाय, नयन जले भासे रे।
काँदे आर बोले हरि, स्वर्ग मर्त्त्य भेद करि, सिंह रबे रे,
आबार दन्ते तृण लये, कृतांजलि होये,
दास्य मुक्ति जाचेन द्वारे द्वारे॥

किबा मुड़ाये चाँचर केश, धरेछेन योगीर वेश,
देखे भक्ति प्रेमावेश, प्राण कैंदे उठे रे।
जीवेर दुःखे कातर होये, ऐलेन सर्वस्व त्यजिये, प्रेम विलाते रे,
प्रेमदासेर वांछा मने, श्री चैतन्य चरणे दास होये, बेड़ाइ द्वारे द्वारे॥

[भावार्थ— केशव भारती की कुटीर में क्या देखकर आया हूँ रे भाई! एक अपरूप ज्योति, श्री गौरांग मूरति! दोनों नयनों से प्रेम शतधाराओं में बह रहा है। गौर मस्त हाथी की भाँति पागल होकर प्रेमावेश में नाचते-गाते हैं, कभी धूल में लोटते हैं। जल नयनों में तैर रहा है। रोते हैं और हरि बोल रहे हैं। स्वर्ग, मर्त्य को सिंह-गरज से भेदन कर रहे हैं और फिर दाँत में तृण लेकर हाथ जोड़कर, द्वारे-द्वारे दास्य मुक्ति माँगते हैं। या अपने कुंचित केशों को मुण्डवाकर, योगी-वेश धारण किया है। उनकी भक्ति का प्रेमावेश देखकर प्राण रो उठता है। जीव के दुःख से कातर होकर, सर्वस्व त्याग करके, प्रेम बाँटने आए हैं, भाई! प्रेमदास के मन में इच्छा है कि श्री चैतन्य-चरणों का दास होकर द्वार-द्वार पर फिरूँ।]

ठाकुर गाना सुनते-सुनते भावाविष्ट हो रहे हैं। कीर्त्तनिया श्रीकृष्ण-विरह-विधुरा (श्रीकृष्ण के विरह में दुःखी) ब्रज-गोपियों की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं।

ब्रजगोपियाँ माधवी-कुञ्ज में माधव को खोज रही हैं—

रे माधवी! आमार माधव दे!
(दे दे दे, माधव दे!)
आमार माधव आमाय दे, दिए बिना मूल्य किने ने।
मीनेर जीवन, जीवन जेमन, आमार जीवन माधव तेमन।
(तूइ लुकाइये रेखेछिस, ओ माधवी!)
(अबला सरला पेये!) (आमि बांचि ना बांचि ना)
(माधवी ओ माधवी, माधव बिने) (माधव अदर्शने)।

[भावार्थ— अरी माधवी! मेरा माधव दे। दे दे दे, माधव दे! मेरा माधव मुझे दे, मूल्य दिए बिना ही तू मुझे खरीद ले। मछली का जीवन जैसे पानी है, वैसे मेरा जीवन माधव है।

तूने छिपा रखा है। हमें अबला, सरला जानकर तूने उसे छिपा रखा है। मैं बचूँगी नहीं। ओ माधवी! ओ माधवी! माधव बिना, माधव के दर्शन बिना नहीं बचूँगी।]

ठाकुर श्रीरामकृष्ण बीच-बीच में पद जोड़ रहे हैं—

(वह मथुरा कितनी दूर है, जहाँ मेरा प्राणवल्लभ है!)

ठाकुर समाधिस्थ! स्पन्दहीन देह! अनेक क्षण स्थिर रहे।

ठाकुर थोड़े प्रकृतिस्थ हुए। किन्तु अब भी भावाविष्ट हैं। ऐसी अवस्था में भक्तों के विषय में बोल रहे हैं। बीच-बीच में माँ के संग बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भावस्थ)*— माँ! उसे खींच लियो, मैं अधिक सोच नहीं सकता! *(मास्टर के प्रति)*— तुम्हारा सम्बन्धी! उसकी ओर थोड़ा-सा मन है। *(गिरीश के प्रति)*— ''तुम गाली-गलौच, खराब बात, बहुत समय बोलो; वैसा होता रहे। वह सब निकल जाना ही भला है। बदरक्त रोग किसी-किसी को होता है। जितना निकल जाए उतना ही भला है।

''उपाधि-नाश के समय ही शब्द होता है। लकड़ी जलते समय चड़्-चड़् शब्द करती है। सम्पूर्ण जल जाने पर फिर शब्द नहीं रहता।

''तुम दिन पर दिन शुद्ध होते जाओगे। तुम्हारी दिन-दिन खूब उन्नति होगी। लोग देखकर अवाक् हो जाएँगे। मैं अधिक नहीं आ सकूँगा, जैसा भी हो, तुम्हारा ऐसे ही हो जाएगा।''

ठाकुर श्रीरामकृष्ण का भाव फिर और घनीभूत हो रहा है। फिर और, माँ के संग बातें कर रहे हैं, 'माँ! जो भला है उसको अच्छा करने में क्या बहादुरी है? माँ, मरे को मारने से क्या होगा? जो खड़ा हुआ है, उसको मारने में ही तो है तुम्हारी महिमा!'

ठाकुर किञ्चित् स्थिर होकर हठात् कुछ ऊँचे स्वर में कहते हैं— ''मैं दक्षिणेश्वर से आया हूँ। जा रहा हूँ माँ!'' जैसे एक बच्चा दूर से माँ की पुकार सुनकर उत्तर देता है!

ठाकुर की अब फिर निस्पन्द देह है, समाधिस्थ बैठे हुए हैं। भक्तगण अनिमेष-लोचन नि:शब्द देख रहे हैं।

ठाकुर भाव में फिर और कहते हैं, ''मैं लुचि (पूरी) अब नहीं खाऊँगा।''

मुहल्ले से दो-एक गोस्वामी आए थे। वे उठकर चले गए।

चतुर्थ परिच्छेद

(ठाकुर श्रीरामकृष्ण देवेन्द्र के घर भक्तों के संग)

ठाकुर भक्तों के संग आनन्द में कथावार्ता कर रहे हैं। चैत्र मास। बड़ी गर्मी है। देवेन्द्र ने कुल्फी-बरफ तैयार की है। ठाकुर और भक्तों को खिला रहे हैं। भक्तगण कुल्फी खाकर आनन्द कर रहे हैं। मणि धीरे-धीरे कह रहे हैं— 'एंकोर! एंकोर।' (अर्थात् और कुल्फी दो) और सब हँस रहे हैं। कुल्फी देखकर ठाकुर को बिलकुल बालक की न्यायीं आनन्द हुआ है।

श्रीरामकृष्ण— सुन्दर कीर्त्तन हुआ। गोपियों की अवस्था सुन्दर कही— 'री माधवी, मेरा माधव दे'— गोपियों की प्रेमोन्माद की अवस्था। कैसा आश्चर्य! कृष्ण के लिए पागल!

एक भक्त और एक को दिखाकर कह रहा है— इनका सखी-भाव है, गोपी-भाव।

राम— इनके भीतर दोनों ही हैं। मधुर भाव और फिर ज्ञान का कठोर भाव भी है।

श्रीरामकृष्ण— क्या भाई ?

ठाकुर अब सुरेन्द्र की बात कह रहे हैं!

राम— मैंने खबर दी थी, आया कहाँ ?

श्रीरामकृष्ण— कर्म में रहकर फिर निकल नहीं सकता।

एकजन भक्त— रामबाबू, आपकी बातें लिख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— क्या लिखा है?

भक्त— 'परमहंस की भक्ति'— इस नाम से एक विषय लिखा है।

श्रीरामकृष्ण— तब फिर क्या, राम का खूब नाम होगा।

गिरीश *(सहास्य)*— वह आपके चेले के नाम से।

श्रीरामकृष्ण— मेरा चेला-शेला नहीं है। मैं हूँ राम का दासानुदास।

मुहल्ले के कोई-कोई व्यक्ति आए थे। किन्तु उन्हें देखकर ठाकुर को आनन्द नहीं हुआ। ठाकुर एक बार बोले, "यह कैसा मुहल्ला है? यहाँ कोई भी नहीं देख रहा हूँ।"

देवेन्द्र अब ठाकुर को घर के भीतर ले जा रहे हैं। वहाँ पर ठाकुर के जलपान का आयोजन हुआ है। ठाकुर भीतर गए। ठाकुर सहास्यवदन। घर के अन्दर से लौट आए और फिर बैठक में बैठ गए। भक्तगण निकट बैठे हैं। उपेन्द्र[1] और अक्षय[2] ठाकुर के दोनों ओर बैठ कर पदसेवा कर रहे हैं। ठाकुर देवेन्द्र के घर की स्त्रियों की बातें बतला रहे हैं— "बढ़िया स्त्रियाँ हैं, देहाती स्त्रियाँ हैं कि ना! खूब भक्ति।"

ठाकुर आत्माराम! अपने आनन्द में गाना गा रहे हैं। किस भाव में गाना गा रहे हैं! अपनी अवस्था स्मरण करके उनको कैसा भावोल्लास हुआ है! जभी क्या कई गाने गा रहे हैं?

गाना— सहज मानुष ना होले सहजके ना जाय चेना।
[सरल मनुष्य हुए बिना 'सहज' को पहचाना नहीं जाता।]

गाना— दरवेश दाँड़ारे, साधेर करओया किस्तिधारी।
दाँड़ारे ओ तोर भाव (रूप) नेहारि॥
[अरे रमते-राम संन्यासी, ज़रा रुको। अपना भिक्षा-पात्र हाथ में लिए तनिक ठहरो ताकि मैं तुम्हारा ज्योतिर्मय रूप निहार सकूँ।]

---

1 उपेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, ठाकुर के भक्त और 'वसुमती' के मालिक।

2 श्री अक्षय कुमार सेन, ठाकुर के भक्त-कवि। ये ही 'श्रीरामकृष्ण पुन्थी' लिखकर चिरस्मरणीय हो गए हैं। बाँकुड़ा जिले के अन्दर मयनापुर ग्राम इनकी जन्म-भूमि है।

गाना— ऐसेछेन एक भावेर फकिर।
(ओ से) हिन्दुर ठाकुर, मुसलमानेर पीर॥
[एक भाव के फकीर आए हैं। वे हिन्दुओं के ठाकुर हैं और मुसलमानों के पीर।]

गिरीश ने ठाकुर को प्रणाम करके विदा ग्रहण की। ठाकुर ने भी गिरीश को नमस्कार किया।

देवेन्द्र आदि भक्तों ने ठाकुर को गाड़ी में बिठा दिया।

देवेन्द्र ने बैठक के दक्षिणी आँगन में आकर देखा कि तख्तपोश के ऊपर उनके मुहल्ले का एक व्यक्ति अब भी सोया हुआ है। वे बोले, ''उठ, उठ''! व्यक्ति आँखें मलता-मलता उठकर बोला, ''क्या परमहंसदेव आ गए?'' सब ही हो-हो कर के हँसने लगे। यह व्यक्ति ठाकुर के आने से पहले आया था, ठाकुर को मिलने के लिए। गरमी लगने से हवा में आँगन में तख्तपोश पर चटाई बिछाकर सो गया था।

ठाकुर दक्षिणेश्वर जा रहे हैं। गाड़ी में मास्टर से आनन्द में कहते हैं— ''खूब कुल्फी खाई! तुम (मेरे लिए) ले आना कोई चार-पाँच।'' ठाकुर फिर और कह रहे हैं, ''अब इन कई छोकरों (लड़कों) के ऊपर मन खिंच रहा है— छोटे नरेन, पूर्ण और तुम्हारा सम्बन्धी।''

मास्टर— द्विज?

श्रीरामकृष्ण— ना, द्विज तो है ही। (अब) उससे बड़े के ऊपर मन जा रहा है।

मास्टर— ओह!

ठाकुर आनन्द में गाड़ी में जा रहे हैं।